

श्रीमद् पद्मप्रभमलधारिदेव पूजन (1)

नियमसार ग्रन्थ के टीकाकार

॥ श्रीमद् पद्मप्रभमलधारिदेव पूजन ॥

स्थापना

(हरिगीतिका)

कारण समय के आश्रय से कार्य परमात्मा हुए।
अरहन्त सिद्धाचार्य पाठक साधु मम उर में बसें॥
नियमसार सुग्रन्थ मुनिवर कुन्द की रचना अहो।
अध्यात्म-सिंधु तरंग उछलें मम हृदय शीतल करो॥1॥
श्री पद्मप्रभमलधारि मुनि पद-पंकजों की सुरभि से।
कारण समय का सार-रस मम भ्रमर परिणति में बहे॥
वीर प्रभु अर पद्मनन्दि ग्रन्थकर्ता को नमूँ।
अध्यात्म-रस भरपूर टीका को सुमति-श्रुत में धरूँ॥2॥

(दोहा)

पद्मप्रभमलधारि मुनि अनुपम टीकाकार।

पद-पंकज उर-सर खिलें साम्य सुधारस धार॥4॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभमलधारिमुनीश्वर! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभमलधारिमुनीश्वर! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभमलधारिमुनीश्वर! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(जोगीरासा)

कारण समयसार-अनुभूति निर्मल जल ले आया।

कार्य समय तटवासी गुरु को सम्यक् नीर चढ़ाया॥

हे पद्मप्रभधारि मुनीश्वर मम उर सदा विराजो।

रत्नत्रय निर्मल जल से मम जन्म जरा निरवारो॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभमलधारिमुनीश्वराय जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय
जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जीव-अजीव सुतत्त्व प्रकाशक शीतल वचन सुहाये।

चिदानन्द सुरभित अगन्ध निज नियमसार मन भाये॥

हे पद्मप्रभधारि मुनीश्वर मम उर सदा विराजो।

रत्नत्रय शीतल सुगन्ध से भव-आताप निवारो॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभमलधारिमुनीश्वराय संसारताप-विनाशनाय चन्दनं
निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत शुद्ध स्वभावमयी ध्रुव की अन्तर परिणति से।

अक्षत के अक्षत अवलम्बन से अक्षत सुख बरसे॥

हे पद्मप्रभधारि मुनीश्वर मम उर सदा विराजो।

गुरु-चरणों की भक्ति अखंडित अक्षय सुख बरसाओ॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभमलधारिमुनीश्वराय अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान्
निर्वपामीति स्वाहा।

निश्चय संग व्यवहार चरित सुमनों की सौरभ महके।

गुरु निर्मल निष्काम भाव से काम-वासना हरते॥

हे पद्मप्रभधारि मुनीश्वर मम उर सदा विराजो।

पद-पंकज में मुग्ध भ्रमर मन को निष्काम बनाओ॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभमलधारिमुनीश्वराय कामबाण-विनाशनाय पुष्पं
निर्वपामीति स्वाहा।

भोग-वासना को अतृप्त लख प्रायश्चित से हरते।

प्रतिक्रमण आलोचन विधि से चिदानन्द रस पीते॥

हे पद्मप्रभधारि मुनीश्वर मम उर सदा विराजो।

निर्विकल्प रस दाता गुरु मम क्षुधारोग विनशाओ॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभमलधारिमुनीश्वराय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

परम समाधि-भक्ति दीप से मोह-तिमिर को हरते।

चित्प्रकाश में चिन्मय-रवि को गुरुवर सदा निरखते॥

हे पद्मप्रभधारि मुनीश्वर मम उर सदा विराजो।

वचन-किरण से गुरुवर मेरा मोह-तिमिर निरवारो॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभमलधारिमुनीश्वराय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं
निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीमद् पद्मप्रभमलधारिदेव पूजन (3)

निर्मल ध्यानानल गुरुवर की परिणति निर्मल करती।
गुरु की पर्यावरण विशुद्धि कर्मेन्धन विनशाती॥
हे पद्मप्रभधारि मुनीश्वर मम उर सदा विराजो।
शुद्ध हृदय में गुरु-भक्ति मम कर्म-कलंक निवारो॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभमलधारिमुनीश्वराय अष्टकर्मविनाशनाय धूपं
निर्वपामीति स्वाहा ।

अहो! शुद्ध उपयोगी गुरुवर सदा स्व-वश ही रहते।
परमावश्यक रत्नत्रय फल-स्वाद निराकुल चखते॥
हे पद्मप्रभधारि मुनीश्वर मम उर सदा विराजो।
शिवफलदाता रत्नत्रय तरु परिणति में विकसाओ॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभमलधारिमुनीश्वराय मोक्षफलप्राप्तये फलं
निर्वपामीति स्वाहा ।

सहज ज्ञान की सहज दृष्टि में ध्रुव अनर्घ्य शोभित है।
सहज चतुष्टय ज्ञान-चेतना सहजानन्द भूषित है॥
हे पद्मप्रभधारि मुनीश्वर मम उर सदा विराजो।
ध्रुव अनर्घ्य पद हेतु रत्नत्रय वैभव मम प्रकटाओ॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभमलधारिमुनीश्वराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

(दोहा)

आनन्दामृत रस भरें कलशों में मुनिराज।
गुरु-वचनों का सार ले सहज रची जयमाला॥1॥

(वीर छन्द)

जो त्रिभुवन के गुरु हैं जिनने चार घाति का किया विनाश।
जिनका ज्ञान त्रिलोक-भवन के सकल पदार्थों का आवास॥
एक वही साक्षात् देव हैं उन्हें बन्ध या मोक्ष नहीं।
उन्हें नहीं है कोई मूर्च्छा और कोई चेतना नहीं॥2॥

सचमुच इन जिन भगवन्तों में धर्म-कर्म का नहीं प्रपंच।
 वीतरागमय सदा विराजित अतः अतुल हैं महिमावन्त॥
 निज-सुख में हैं लीन सदा वे, शोभावन्त श्री भगवान।
 ज्ञान-ज्योति से पूर्ण लोक में छाये मुक्ति-वधू के नाथ॥3॥
 मुक्ति का कारण होने से नियमसार अरु उसका फल।
 बुध पुरुषों के हृदय-कमल में जो नित रहता है जयवन्त॥
 सूत्रकार श्री कुन्दकुन्द ने भक्तिपूर्वक रचा इसे।
 वास्तव में वह भव्य-जनों को मोक्ष-महल का मारग है॥4॥
 जब तक तारागण से शोभित चन्द्रबिम्ब उज्ज्वल नभ में।
 हेय-वृत्ति नाशक यह टीका रहो सज्जनों के उर में॥5॥
 पद्मप्रभ नामक उत्तम सागर से जो उत्पन्न अहो।
 उर्मिमाल यह सत्पुरुषों के चित में स्थित सदा रहो॥6॥
 कविजनरूपी कमलों को विकसाने वाला अद्भुत सूर्य।
 सुन्दर पद-समूह द्वारा यह उत्तम शास्त्र रचा भरपूर॥
 जो विशुद्ध आत्मा के वांछक जीव इसे धारण करते-
 निज मन में, वे परम-श्रीरूपी कामिनी-वल्लभ होते॥7॥

(दोहा)

चरण-कमल जिनराज के, उर में बसे सदैव।
 भक्ति-अर्घ्य अर्पित प्रभो! ध्याऊँ निज ध्रुव एक॥8॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभमलधारिमुनीश्वराय अनर्घ्यपद-प्राप्तये
 जयमालापूर्णाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

वीर-कुन्द मुनि-पदम को वन्दूँ बारम्बार।
 अर्पित हैं श्रद्धा-सुमन स्वानुभूति रसधार॥9॥

(इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्)